- भगवान् बादरायण व्यास ने भी ब्रह्मसूत्रस्थ **''विप्रतिषेधाच्च''** के द्वारा इसी मत को सूचित किया है।
- भगवान् जैमिनि ने पूर्वमीमांसादर्शन में **''नित्यस्तु स्याद् दर्शनस्य परार्थत्वात्''** इत्यादि छः सूत्रों द्वारा अनित्यवादी पक्षों के तर्कों का खण्डन करते हुए, वेदों का नित्यत्व प्रतिपादित करते हैं।
- उत्तरमीमांसा में महर्षि बादरायण व्यास जी ने **''शास्त्रयोनित्वात्''** इस सूत्र के द्वारा वेदों का उद्गम परब्रह्म से ही हुआ है। इस सिद्धान्त को स्थापित किया है।
- नैयायिकों का मानना है कि- ''सृष्टि के आदि में ईश्वर की निःश्वासवायु से वेदों की उत्पत्ति हुई-

''अनादिनिधना नित्या वागुत्सृष्टा स्वयम्भुवा।
आदौ वेदमयी दिव्या यतः सर्वा प्रवृत्तयः॥''

- इसप्रकार भारतीय परम्परावादी विद्वान् वेदों को नित्य स्वीकार करते हुए अपौरुषेय मानते हैं।

ऋग्वेद के संवाद सूक्त

1. पुरूरवा-उर्वशी संवाद सूक्त (ऋग्वेद 10/95)

मण्डल- 10, **सूक्त** - 95, **कुल मन्त्र** - 18		
ऋषि	-	पुरूरवा ऐळ और उर्वशी।
देवता	-	उर्वशी और पुरूरवा ऐळ।
छन्द	-	त्रिष्टुप्।
स्वर	-	धैवत।

पुरूरवा उर्वशी की कथा को समझने के लिए प्रारम्भ के ये छह श्लोक बृहद्देवता के आधार पर दिये जा रहे हैं।

पुरूरवसि राजवर्षावप्सरास्तूर्वशी पुरा।
न्यवसत्संविदं कृत्वा तस्मिन् धर्मं चचार च॥147॥

प्राचीनकाल में उर्वशी नाम की अप्सरा, पुरूरवा नाम के राजर्षि के साथ रही। नियमपूर्वक वह उसके साथ लोक-धर्म में प्रवृत्त हुई।

तया तस्य च संवासमसूयन् पाकशासनः।
पैतामहं चानुरागमिन्द्रवच्चापि तस्य तु॥148॥

इन्द्र ने उर्वशी के साथ पुरूरवा के सहवास तथा पुरूरवा पर इन्द्र तुल्य ब्रह्मा के प्रेम की ईर्ष्या करते हुए (अपने बगल में बैठे हुए) वज्र से कहा।)

स तयोस्तु तु वियोगार्थं पार्श्वस्थं वज्रमब्रवीत्।
प्रीतिं भिन्द्धि तयोर्वज्र मम चेदिच्छसि प्रियम् ॥149॥

(उस इन्द्र ने उन दोनों अर्थात् पुरूरवा और उर्वशी का वियोग कराने के लिए पार्श्वस्थ वज्र से कहा, हे वज्र! यदि मेरा प्रिय चाहो, तो उन दोनों का प्रेम तोड़ दो।

तथेत्युक्त्वा तयोः प्रीतिं वज्रोऽभिनत् स्वमायया।
ततस्तया विहीनस्तु चचारोन्मत्तवन्नृपः॥150॥

वज्र ने कहा – वैसा ही होगा (तथा) उसने अपनी माया से उनका प्रेम तोड़ दिया; तब उर्वशी से वियुक्त होकर पुरूरवा पागल की भाँति इधर-उधर घूमने लगा।

चरन् सरसि सोऽपश्यदभिरूपामिवोर्वशीम् ।
सखीभिरभिरूपाभिः पञ्चभिः पार्श्वतो वृताम् ॥151॥

इधर-उधर भटकते हुए उस पुरूरवा ने एक सरोवर में पाँच अपने समान रूपवती सखियों के साथ सुन्दरी उर्वशी को देखा।

तामाह पुनरेहीति दुःखात्सा त्वब्रवीन्नृपम् ।
अप्राप्याहं त्वयाद्येहस्वर्गे प्राप्स्यसि मां पुनः॥152॥

(पुरूरवा ने उससे कहा-पुनः मेरे पास आओ; परन्तु उस उर्वशी ने दुःख के साथ राजा को उत्तर दिया – अब मैं तुम्हारे लिए अप्राप्य हूँ। तुम मुझे पुनः स्वर्ग में प्राप्त करोगे।)

नोट – उपर्युक्त श्लोक क्रमाङ्क 147 से 152 तक; ऋग्वेद में उल्लिखित न होने के कारण कथाक्रम को ध्यान में रखते हुए, बृहद्देवता /7/147-152 (पुरूरवा-उर्वशी-वृत्तान्त) के आधार पर दिया गया है। ऋग्वेदस्थ मूल संवाद-सूक्त निम्नलिखित है।

हये जाये मनसा तिष्ठ घोरे वचांसि मिश्रा कृणवावहै नु।
न नौ मन्त्रा अनुदितास एते मयस्करन् परतरे चनाहन् ॥1॥

(पुरूरवा ने उर्वशी से कहा) – हे निर्दय नारी! तुम अपने मन को अनुरागी बनाओ। हम शीघ्र ही परस्पर वार्तालाप करें। यदि हम इस समय मौन रहेंगे तो आने वाले दिनों में सुखी नहीं होंगे।।1।।

किमेता वाचा कृणवा तवाहं प्राक्रमिषमुषसामग्रियेव।
पुरूरवः पुनरस्तं परेहि दुरापना वातइवाहमस्मि॥2॥

(उर्वशी ने उत्तर दिया) – हे पुरूरवा! वार्तालाप से कोई लाभ नहीं। मैं वायु के समान ही दुष्प्राप्य नारी हूँ। उषा के समान तुम्हारे पास से मैं चली जा रही हूँ। तुम अपने गृह को लौट जाओ।।2।।

इषुर्न श्रिय इषुधेरसना गोषाः शतसा न रंहिः।
अवीरे क्रतौ वि दविद्युतन्नोरा न मायुं चितयन्त धुनयः॥3॥

(पुरूरवा ने कहा)- हे उर्वशी! मैं तुम्हारे वियोग में इतना सन्तप्त हूँ कि, अपने तूणीर से बाण निकालने में भी असमर्थ हो रहा हूँ। इस कारण मैं युद्ध जीतकर असीमित गायों को नहीं ला सकता। मैं राजकार्यों से विमुख हो गया हूँ। अतः मेरे सैनिक भी कार्यहीन हो गए हैं।।3।।

सा वसु दधती श्वसुराय वय उषो यदि वष्ट्यन्तिगृहात् ।
अस्तं ननक्षे यस्मिञ्चाकन्दिवा नक्तं श्नथिता वैतसेन॥4॥

हे उषा! उर्वशी यदि श्वसुर को भोजन कराना चाहती तो निकटस्थ घर से पति के पास जाती और दिन रात स्वामी के पास रमणसुख भोगती।।4।।

त्रिः स्म माह्नः श्नथयो वैतसेनोत स्म मेऽव्यत्यै पृणासि।
पुरूरवोऽनु ते केतमायं राजा मे वीर तन्वस्तदासीः॥5॥

(उर्वशी ने कहा) – हे पुरूरवा! मुझे किसी सपत्नी से प्रतिस्पर्द्धा नहीं थी, क्योंकि मैं तुमसे हर प्रकार से सन्तुष्ट थी। जब से मैं तुम्हारे घर से आई तभी से तुमने सुखों का विधान किया।।5।।

या सुजूर्णिः श्रेणिः सुम्नआपिह्नदेचक्षुर्न ग्रन्थिनी चरण्युः।
ता अञ्जयोऽरुणयो न सस्त्रुः श्रिये गावो न धेनवोऽनवन्त॥6॥

सुजूर्णि, श्रेणि, सुम्न आदि अप्सराएँ मलिन वेश में यहाँ आती थीं। गोष्ठ में जाती हुई गायें जैसे शब्द करती हैं, वैसे ही शब्द करने वाली वे महिलाएँ मेरे घर में नहीं आती थीं।।6।।

समस्मिञ्जायमान आसत ग्ना उतेमवर्धन्नद्यः स्वगूर्ताः।
महे यत्त्वा पुरूरवो रणायावर्धयन् दस्युहत्याय देवाः॥7॥

जब पुरूरवा उत्पन्न हुआ, तब सभी देवाङ्गनाएँ उसे देखने आयीं। नदियों ने भी उसकी प्रशंसा की। तब हे पुरूरवा! देवताओं ने घोर संग्राम में जाने तथा दस्यु के विनाश हेतु तुम्हारी स्तुति की।।7।।

सचा यदासु जहतीष्वत्कममानुषीषु मानुषो निषेवे।
अप स्म मत्तरसन्ती न भुज्युस्ता अत्रसन्रथस्पृशो नाश्वाः॥8॥

जब पुरूरवा मनुष्य होकर अप्सराओं की ओर गए, तब अप्सराएँ अन्तर्धान हो गई। वह उसी प्रकार वहाँ से चली गई, जैसे भयभीत हरिणी भागती है या रथ में योजित अश्व द्रुतगति से चले जाते हैं।।8।।

यदासु मर्तो अमृतासु निस्पृक्सं क्षोणीभिः क्रतुभिर्न पृङ्क्ते।
ता आतयो न तन्वः शुम्भत स्वा अश्वासो न क्रीळयो दन्दशानाः॥9॥

मनुष्य योनि को प्राप्त हुए पुरूरवा जब दिव्यलोकवासिनी अप्सराओं की ओर बढ़े, तो वे अप्सराएँ वैसे ही भाग गई, जैसा क्रीडाकारी अश्व भाग जाता है।।9।।

विद्युन्न या पतन्ती दविद्योद्भरन्ती मे अप्या काम्यानि।
जनिष्टो अपो नर्यः सुजातः प्रोर्वशी तिरत दीर्घमायुः॥10॥

जो उर्वशी अंतरिक्ष की विद्युत् के समान आभामयी है, उसने मेरी सभी अभिलाषाओं को पूर्ण किया था। वह उर्वशी अपने द्वारा उत्पन्न मेरे पुत्र को दीर्घजीवी करें।।10।।

जज्ञिष इत्था गोपीथ्याय हि दधाथ तत्पुरूरवो म ओजः।
अशासं त्वा विदुषी सस्मिन्नहन्न म आश्रृणोः किमभुग्वदासि॥11॥

(उर्वशी ने कहा) – हे पुरूरवा! तुमने पृथिवी की रक्षा के लिए पुत्र उत्पन्न किया है। मैं तुमसे अनेक बार कह चुकी हूँ, मैं तुम्हारे पास नहीं रहूँगी। तुम इस समय प्रजा-पालन के कार्य से विमुख होकर व्यर्थ-वार्तालाप क्यों करते हो?।।11।।

कदा सूनुः पितरं जात इच्छाच्चक्रन्नाश्रु वर्तयद्विजानन् ।
को दम्पती समनसा वि यूयोदध यदग्निः श्वशुरेषु दीदयत् ॥12॥

(पुरूरवा ने कहा) – हे उर्वशी! तुम्हारा पुत्र मेरे पास किस प्रकार रहेगा? वह मेरे पास आकर रोवेगा। पारस्परिक प्रेम के बन्धन को कौन सद्गृहस्थ तोड़ना स्वीकार करेगा? तुम्हारे श्वशुर के घर में श्रेष्ठ आलोक जगमगा उठा है।।12।।

प्रति ब्रवाणि वर्तयते अश्रु चक्रन्न क्रन्ददाध्ये शिवायै।
प्र तत्ते हिनवा यत्ते अस्मे परेह्यस्तं नहि मूर मापः॥13॥

(उर्वशी ने कहा) – हे पुरूरवा मेरा उत्तर सुनो। मेरा पुत्र तुम्हारे पास आकर नहीं रोयेगा। मैं सदैव उसकी मंगल-कामना करूँगी। तुम अब मुझे नहीं पा सकोगे। अतः अपने घर को लौट जाओं। मैं तुम्हारे पुत्र को तुम्हारे पास भेज दूँगी।।13।।

सुदेवो अद्य प्रपतेदनावृत्परावतं परमां गन्तवा उ।
अधा शयीत निर्ऋतेरुपस्थेऽधैनं वृका रभसासो अद्युः॥14॥

(पुरूरवा ने कहा) – हे उर्वशी! मैं तुम्हारा पति आज पृथिवी पर गिर पड़ा हूँ। वह (मैं) फिर कभी न उठ सका। वह दुर्गति के बन्धन में फँसकर मृत्यु को प्राप्त हो, और वृक (भेड़िया) आदि उसके शरीर का भक्षण करें।।14।।

पुरूरवो मा मृथा मा प्र पप्तो मा त्वा वृकासो अशिवास उ क्षन् ।
न वै स्त्रैणानि सख्यानि सन्ति सालावृकाणां हृदयान्येता॥15॥

(उर्वशी ने कहा) – हे पुरूरवा! तुम गिरो मत। तुम अपनी मृत्यु की इच्छा मत करो। तुम्हारे शरीर को वृक आदि भक्षण न करें। स्त्रियों का और वृकों का हृदय एक समान होता है, उनकी मित्रता कभी अटूट (स्थायी) नहीं रहती।।15।।

यद्विरूपाचरं मर्त्येष्ववसं रात्रीः शरदश्चतस्त्रः।
घृतस्य स्तोकं सकृदह्न आश्नां तादेवेदं तातृपाणा चरामि॥16॥

(उर्वशी ने कहा) – मैंने विविध रूप धारण करके मनुष्यों में विचरण किया। चार वर्षों तक मैं मनुष्यों में ही वास करती रही। नित्यप्रति एक बार घृतपान करती हुई घूमती रही।।16।।

अन्तरिक्षप्रां रजसो विमानीमुप शिक्षाम्युर्वशीं वशिष्ठः।
उप त्वा रातिः सुकृतस्य तिष्ठान्नि वर्तस्व हृदयं तप्यते मे॥17॥

(पुरूरवा ने कहा) – उर्वशी जल को प्रकट करने वाली तथा अंतरिक्ष को पूर्ण करने वाली है। वशिष्ठ ही उसे अपने वश में कर सके हैं। तुम्हारे पास उत्तमकर्मा पुरूरवा रहे (मैं रहूँ)। हे उर्वशी! मेरा हृदय जल रहा है, अतः लौट आओं।।17।।

इति त्वा देवा इम आहुरैळ यथेमेतद्भवसि मृत्युबन्धुः।
प्रजा ते देवान् हविषा यजाति स्वर्ग उ त्वमपि मादयासे॥18॥

(उर्वशी ने कहा) – हे पुरूरवा! सभी देवताओं का कथन है कि, तुम मृत्यु को जीतने वाले होओगे और हव्य द्वारा देवताओं का यज्ञ करोगे, फिर स्वर्ग में आनन्दपूर्वक वास करोगे।।18।।

2. यम-यमी संवाद सूक्त (ऋग्वेद 10/10)

मण्डल–10, **सूक्त** – 10, **कुल मन्त्र** – 14
ऋषि– यम वैवस्वत, यमी
देवता – यम वैवस्वत, यमी वैवस्वती **छन्द**– त्रिष्टुप्

ओ चित् सखायं सख्या ववृत्यां तिरः पुरू चिदर्णवं जगन्वान् ।
पितुर्नपातमा दधीत वेधा अधि क्षमि प्रतरं दीध्यानः॥1॥

(यमी अपने सहोदर भाई यम से कहती है) – विस्तृत समुद्र के मध्य द्वीप में आकर, इस निर्जन प्रदेश में मैं तुम्हारा सहवास (मिलन) चाहती हूँ, क्योंकि माता की गर्भावस्था से ही तुम मेरे साथी हो। विधाता ने मन ही मन समझा है कि तुम्हारे द्वारा मेरे गर्भ से जो पुत्र उत्पन्न होगा; वह हमारे पिता का एक श्रेष्ठ नाती होगा।

न ते सखा सख्यं वष्ट्येतत् सलक्ष्मा यद्विषुरूपा भवाति।
महस्पुत्रासो असुरस्य वीरा दिवो धर्तार उर्विया परिख्यन्॥2॥

(यम ने कहा) – यमी, तुम्हारा साथी यम, तुम्हारे साथ ऐसा सम्पर्क नहीं चाहता; क्योंकि तुम भी सहोदरा भगिनी हो, अतः अगन्तव्या हो। यह निर्जन प्रदेश नहीं है; क्योंकि द्युलोक को धारण करने वाले महान् बलशाली प्रजापति के पुत्रगण (देवताओं के चर) सब कुछ देखते हैं।

उशन्ति घा ते अमृतास एतदेकस्य चित्त्यजसं मर्त्यस्य।
नि ते मनो मनसि धाय्यस्मे जन्युः पतिस्तन्वमा विविश्याः॥3॥

(यमी ने कहा) – यद्यपि मनुष्य के लिए ऐसा संसर्ग निषिद्ध है, तो भी देवता लोग इच्छा पूर्वक ऐसा संसर्ग करते हैं। अतः मेरी इच्छानुकूल तुम भी करो। पुत्र-जन्मदाता पति के समान मेरे शरीर में बैठो (मेरा सम्भोग करो।)।

न यत्पुरा चकृमा कद्ध नूनमृता वदन्तो अनृतं रपेम।
गन्धर्वो अप्स्वप्या च योषा सा नो नाभिः परमं जामि तन्नौ॥4॥

(यम ने उत्तर दिया) – हमने ऐसा कर्म कभी नहीं किया। हम सत्यवक्ता हैं। कभी

मिथ्या कथन नहीं किया है। अन्तरिक्ष में स्थित गन्धर्व या जल के धारक आदित्य तथा अन्तरिक्ष में रहने वाली योषा (सूर्यस्त्री-सरण्यू) हमारे माता-पिता हैं। अतः, हम सहोदर बन्धु हैं। ऐसा सम्बन्ध उचित नहीं है।

गर्भे नु नौ जनिता दम्पती कर्देवस्त्वष्टा सविता विश्वरूपः।
नकिरस्य प्र मिनन्ति व्रतानि वेद नावस्य पृथ्वी उत द्यौः॥5॥

(यमी ने कहा) - रूपकर्ता, शुभाशुभ प्रेरक, सर्वात्मक, दिव्य और जनक प्रजापति ने तो हमें गर्भावस्था में ही दम्पति बना दिया। प्रजापति का कर्म कोई लुप्त नहीं कर सकता। हमारे इससे सम्बन्ध को द्यावा-पृथ्वी भी जानते हैं।

को अस्य वेद प्रथमस्याह्नः क ईं ददर्श क इह प्र वोचत् ।
बृहन्मित्रस्य वरुणस्य धाम कदु ब्रव आहनो वीच्या नृन् ॥6॥

(यमी ने पुनः कहा) - प्रथम दिन (संगमन) की बात कौन जानता है? किसने उसे देखा है? किसने उसका प्रकाश किया है? मित्र और वरुण का यह जो महान् धाम (अहोरात्र) है, उसके बारे में हे मोक्ष, बन्धनकर्ता यम! तुम क्या कहते हो?

यमस्य मा यम्यं काम आगन्त्समाने योनौ सहशेय्याय।
जायेव पत्ये तन्वं रिरिच्यां वि चिद् वृहेव रथ्येव चक्रा॥7॥

(यमी ने कहा) – जैसे एक शैया पर पत्नी, पति के साथ अपनी देह का उद्घाटन करती है, वैसे ही तुम्हारे पास मैं अपने शरीर को प्रकाशित कर देती हूँ। तुम मेरी अभिलाषा करो। आओ दोनों एक स्थान पर शयन करें। रथ के दोनों चक्कों के समान एक कार्य में प्रवृत्त हों।

न तिष्ठन्ति न नि मिषन्त्येते देवानां स्पश इह ये चरन्ति।
अन्येन मदाहनो याहि तूयं तेन वि वृह रथ्येव चक्रा॥8॥

(यम ने उत्तर दिया) – देवों में जो गुप्तचर हैं, वे रात-दिन विचरण करते हैं। उनकी आँखे कभी बन्द नहीं होती। दुःखदायिनी यमी! शीघ्र दूसरे के पास जाओ, और रथ के चक्कों के समान उसके साथ एक कार्य करो।

रात्रीभिरस्मा अहभिर्दशस्येत् सूर्यस्य चक्षुर्मुहुरुन्मिमीयात् ।
दिवा पृथिव्या मिथुना सबन्धू यमीर्यमस्य बिभृयादजामि॥9॥

(यम ने पुनः कहा) – दिन-रात में यम के लिए जो कल्पित भाग हैं, उसे यजमान दें। सूर्य का तेज यम के लिए उदित हो। परस्पर सम्बद्ध दिन, द्युलोक और भूलोक यम के बन्धु हैं। यमी, यम भ्राता के अतिरिक्त किसी अन्य पुरुष को धारण करें।

आ घा ता गच्छानुत्तरा युगानि यत्र जामयः कृणवन्नजामि।
उप बर्बृहि वृषभाय बाहुमन्यमिच्छस्व सुभगे पतिं मत्॥10॥

(यम ने पुनः कहा) – भविष्य में ऐसा युग आयेगा, जिसमें भगिनियाँ अपने बन्धुत्व विहीन भ्राता को पति बनावेंगी। सुन्दरी! मेरे अतिरिक्त किसी दूसरे को पति बनाओ।

वह वीर्य सिंचन करेगा; उस समय उसे बाहुओं में आलिङ्गन करना।

किं भ्रातासद्यदनाथं भवाति किमु स्वसा यन्निर्ऋतिर्निगच्छात्।
काममूता बह्वे तद्रपामि तन्वा मे तन्वं सं पिपृग्धि॥11॥

(यमी ने कहा) – वह कैसा भ्राता है, जिसके रहते भगिनी अनाथा हो जाय, और भगिनी ही क्या है, जिसके रहते भ्राता का दुःख दूर न हो? मैं काम मूर्च्छिता होकर नाना प्रकार से बोल रही हूँ; यह विचार करके भली-भाँति मेरा सम्भोग करो।

न वा उ ते तन्वा तन्वं सं पपृच्यां पापमाहुर्यः स्वसारं निगच्छात् ।
अन्येन मत् प्रमुदः कल्पयस्व न ते भ्राता सुभगे वष्ट्येतत् ॥12॥

(यम ने उत्तर दिया) – हे यमी! मैं तुम्हारे शरीर से अपना शरीर मिलाना नहीं चाहता। जो भ्राता, भगिनी का सम्भोग करता है, उसे लोग पापी कहते हैं। सुन्दरी! मुझे छोड़कर अन्य के साथ आमोद-प्रमोद करो। तुम्हारा भ्राता तुम्हारे साथ मैथुन करना नहीं चाहता।

बतो बतासि यम नैव ते मनो हृदयं चाविदाम।
अन्या किल त्वां कक्ष्येव युक्तं परिष्वजाते लिबुजेव वृक्षम् ॥13॥

(यमी ने कहा) – हाय यम; तुम दुर्बल हो। तुम्हारे मन और हृदय को मैं कुछ नहीं समझ सकती। जैसे-रस्सी घोड़े को बाँधती है, तथा लता जैसे वृक्ष का आलिङ्गन करती है, वैसे ही अन्य स्त्री तुम्हें अनायास ही आलिङ्गन करती है; परन्तु तुम मुझे नहीं चाहते हो।

अन्यमूषु त्वं यम्यन्य उ त्वां परिष्वजाते लिबुजेव वृक्षम्।
तस्य वा त्वं मन इच्छा स वा तवाऽधा कृणुष्व संविदं सुभद्राम् ॥14॥

(यम ने यमी से कहा) – तुम भी अन्य पुरुष का ही भली-भाँति आलिङ्गन करो। जैसे-लता, वृक्ष का आलिङ्गन करती है, वैसे ही अन्य पुरुष तुम्हें आलिङ्गित करें। तुम उसी का मन हरण करो। अपने सहवास का प्रबन्ध उसी के साथ करो। इसी में मङ्गल होगा।

3. सरमा-पणि संवाद सूक्त (ऋग्वेद, 10/108)

मण्डल - 10	**सूक्त-**108	**कुल मन्त्र -** 11
ऋषि– पणि एवं सरमा	**देवता-** सरमा एवं पणि	
छन्द- त्रिष्टुप्	**स्वर-**धैवत	

किमिच्छन्ती सरमा प्रेदमानड् दूरे ह्यध्वा जगुरिः पराचैः।
कास्मेहितिः का परितक्म्यासीत्कथं रसाया अतरः पयांसि॥1॥

(सरमा क्या इच्छा करती हुई इस स्थान पर पहुँची है, क्योंकि मार्ग बहुत दूर उभरा हुआ तथा गमनागमन से रहित है। हममें तुम्हारा कौन-सा अभिप्रेत अर्थ निहित है?

तुम्हारी यात्रा कैसी थी? रसा (नदी) के जल को तुमने कैसे पार किया?)

इन्द्रस्य दूतीरिषिता चरामि मह इच्छन्ती पणयो निधीन्वः।

अतिष्कदो भियसा तन्न आवत्तथा रसाया अतरं पयांसि॥2॥

(हे पणियों! इन्द्र के द्वारा भेजी गई, मैं उसकी दूती हूँ। तुम लोगों के प्रभूत धन की इच्छा करती हुई घूम रही हूँ। मेरे कूदने के भय से उस रसा के जल ने मेरी सहायता की। इस प्रकार रसा के जल को मैंने पार किया।)

कीदृङ्ङिन्द्रः सरमे का दृशीका यस्येदं दूतीरसरः पराकात् ।

आ च गच्छान्मित्रमेना दधामाथा गवां गोपतिर्नो भवाति॥3॥

(हे सरमा! इन्द्र कैसा है? उसकी दृष्टि कैसी है? जिसकी दूती (तुम) दूर से यहाँ आई हो। अगर वह आवे, तो हम उसे मित्र बनावेंगे। तब वह हमारी गायों का संरक्षक (गोपति) होगा।)

नाहं तं वेद दभ्यं दभत्स यस्येदं दूतीरसरं पराकात्।

न तं गूहन्ति स्रवतो गभीरा हता इन्द्रेण पणयः शयध्वे॥4॥

(सरमा ने कहा) – मैं उसको कष्ट पहुँचाया जाने वाला नहीं समझती हूँ, अपितु वह (शत्रुओं को) कष्ट देता है। जिसकी मैं दूती बनकर दूर से यहाँ आई हूँ। बहती हुई गहरे जल वाली नदियाँ उसको छिपा नहीं सकतीं। हे पणियों! इन्द्र द्वारा मारे जाकर तुम लोग (पृथ्वी पर) पड़ जाओगे।

इमा गावः सरमे या ऐच्छः परि दिवो अन्तान्त्सुभगे पतन्ती।

कस्त एना अव सृजादयुध्व्युतास्माकमायुधा सन्ति तिग्मा॥5॥

(पणियों ने कहा) – हे सरमा! आकाश की छोर तक चारों तरफ घूमती हुई इन गायों को, जिनकी तुमने इच्छा की है। हे सौभाग्यवती! तुममें से कौन मुक्त कर सकता है? और हमारे शस्त्र भी अत्यन्त तीक्ष्ण हैं।

असेन्या वः पणयो वचांस्यनिषव्यास्तन्वः सन्तु पापीः।

अधृष्टो व एतवा अस्तु पन्था बृहस्पतिर्व उभया न मृळात्॥6॥

(सरमा ने पूछा) – हे पणियों! तुम्हारे वचन शस्त्र के आघात से सुरक्षित हैं, तथा पापी शरीर बाणों के निशाने से बचने वाले हो सकते हैं। तुम्हारे पास पहुँचने के लिए मार्ग भी अगम्य हो सकता है, किन्तु किसी भी प्रकार से बृहस्पति दया नहीं करेंगे।

अयं निधिः सरमे अद्रिबुध्नो गोभिरश्वेभिर्वसुभिर्न्यृष्टः।

रक्षन्ति तं पणयो ये सुगोपा रेकु पदमलकमा जगन्थ॥7॥

(पणियों ने कहा) – हे सरमा! गायों, अश्वों तथा रत्नों से भरा हुआ यह खजाना पर्वतों से ढका हुआ है। कुशल रक्षक पणि, इसकी रक्षा करते हैं। तुम व्यर्थ में इस खाली स्थान पर आई हो।

एह गमन्नृषयः सोमशिता अयास्यो अङ्गिरसो नवग्वाः।
त एतमूर्वं वि भजन्त गोनामथैतद्वचः पणयो वमन्नित्॥8॥

(सरमा ने कहा) – सोमपान से उत्तेजित, अयास्य, अङ्गिरस, नवग्वा आदि ऋषि यहाँ पर आयेंगे। वे गायों के इस विशाल समूह को बाँट लेंगे। तब पणियों को अपने इस वचन को उगलना पड़ेगा।

एवा च त्वं सरम आजगन्थ प्रबाधिता सहसा दैव्येन।
स्वसारं त्वा कृणवै मा पुनर्गा अप ते गवां सुभगे भजाम॥9॥

(पणियों के कहा) – हे सरमा! इस प्रकार यदि तुम देवताओं की शक्ति से पीड़ित की गई हो, तो हम तुम्हें बहन बनाते हैं। फिर मत जाओं। हे सौभाग्यवती! हम तुम्हें गायों का अलग हिस्सा देंगे।

नाहं वेद भ्रातृत्वं नो स्वसृत्वमिन्द्रो विदुरङ्गिरसश्च घोराः।
गोकामा मे अच्छदयन्यदायमपात इत पणयो वरीयः॥10॥

(सरमा ने कहा) - मैं न तो भ्रातृत्व को जानती हूँ न स्वसृत्व को, इन्द्र तथा भयानक अङ्गिरस इसको जानते हैं। जब मैं आई (तत्व) वे गायों की इच्छा करने वाले मालूम पड़े। अतः हे पणियों किसी विस्तृत स्थान पर चले जाओ

दूरमित पणयो वरीय उद्
गावो यन्तु मिनतीर्ऋतेन।
बृहस्पतिर्या अविन्दन्निगूळहाः
सोमो ग्रावाण ऋषयश्च विप्राः॥11॥

(सरमा ने कहा) – हे पणियों! किसी विस्तृत स्थान पर चले जाओ। छिपी हुई गायें, चट्टानों के आवरण को तोड़ती हुई सत्य नियम के अनुकूल बाहर निकलें, जिनको बृहस्पति ने ढूँढ़ निकाला है तथा जिनका, सोम ने, पत्थरों ने तथा बुद्धिमान् ऋषियों ने (पता लगाया है।)।

4. विश्वामित्र–नदी संवाद (ऋग्वेद 3/33)

मण्डल–3	**सूक्त-**33	**कुल मन्त्र-**13	**ऋषि-**विश्वामित्र
देवता-नदियाँ विपाट् शुतुद्री।	**छन्द-**पंक्ति, त्रिष्टुप्		

प्र पर्वतानामुशती उपस्थादश्वेइव विषिते हासमाने।
गावेव शुभ्रे मातरा रिहाणे विपाट्छुतुद्री पयसा जवेते॥1॥

पर्वतों की गोद से निकलकर समुद्र की ओर जाने की इच्छा करती हुई (परस्पर) स्पर्द्धा से दौड़ती हुई, खुले बाग वाली दो घोड़ियों की तरह (बछड़े) को चाटती हुई दो सफेद माता गायों की तरह विपाट् और शुतुद्री (अपने) प्रवाह से तेजी से बह रही हैं।

इन्द्रेषिते प्रसवं भिक्षमाणे अच्छा समुद्रं रथ्येव याथः।
समाराणे ऊर्मिभिः पिन्वमाने अन्या वामन्यामप्येति शुभ्रे॥2॥

इन्द्र द्वारा भेजी गई, बहने के लिए प्रार्थना करती हुई, दो रथियों की तरह समुद्र की ओर जा रही हो। हे शुभ्रे! एक साथ जाती हुई, लहरों से उमड़ती हुई, तुममें से प्रत्येक एक दूसरे की ओर जा रही हो।

अच्छा सिन्धुं मातृतमामयासं विपाशमुर्वीं सुभगामगन्म।
वत्समिव मातरासंरिहाणे समानं योनिमनु सञ्चरन्ती॥3॥

श्रेष्ठ नदी माता (शुतुद्री) के पास आया हूँ। चौड़ी तथा सुन्दर विपाट् के पास आया हूँ। बछड़े को चाटती हुई दो माताओं की तरह, एक ही स्थान (समुद्र) को लक्ष्य करके बहती हुई (शुतुद्री और विपाट्) के पास आया हूँ।

एना वयं पयसा पिन्वमाना अनुयोनिं देवकृतं चरन्तीः।
न वर्तवे प्रसवः सर्गतक्तः किंयुर्विप्रो नद्यो जोहवीति॥4॥

ऐसी हम लोग अपनी धारा से उमड़ रही हैं तथा देव (इन्द्र) द्वारा निर्मित स्थान पर चल रही हैं। स्वाभाविक रूप से प्रवाहित हम लोगों की गति रुकने के लिए नहीं है। किस इच्छा से ऋषि (विश्वामित्र) नदियों की बार-बार स्तुति कर रहा है।

रमध्वं मे वचसे सोम्याय ऋतावरीरुप मुहूर्तमेवैः।
प्र सिन्धुमच्छा बृहती मनीषावस्युरह्वे कुशिकस्य सूनुः॥5॥

हे पवित्र जलवाली (नदियों)! सोमाप्लावित मेरे वचनों के प्रति अपनी यात्रा से क्षणभर के लिए रुक जाओ। अपनी सहायता का इच्छुक, कुशिकपुत्र मैंने ऊँची स्थिति से नदी (शुतुद्री) का आह्वाहन किया है।

इन्द्रो अस्माँ अरदद्वज्रबाहुरपाहन्वृत्रं परिधिं नदीनाम्।
देवोऽनयत्सविता सुपाणिस्तस्य वयं प्रसवे याम उर्वीः॥6॥

वज्रधारी इन्द्र ने हमें खोदकर बाहर किया। उसने नदियों को घेरने वाले वृत्र को मारा। सुन्दर हाथों वाले सवितृ देव ने हम लोगों को लाया। हम जितनी चौड़ी हैं, उसकी आज्ञा में निरन्तर बहती हैं।

प्रवाच्यं शश्वधा वीर्यं तद् इन्द्रस्य कर्म यदहिं विवृश्चत्।
वि वज्रेण परिषदो जघानायन्नापोऽयनमिच्छमानाः॥7॥

इन्द्र का वह पराक्रमयुक्त कार्य, जो उसने अहि को मारा, अवश्य कहने योग्य है। उसने वज्र से (जल के) प्रतिबन्धकों को काट डाला। जल अपना मार्ग खोजता हुआ प्रवाहित हुआ।

एतद्वचो जरितर्मापि मृष्ठा आ यत्ते घोषानुत्तरा युगानि।
उक्थेषु कारो प्रति नो जुषस्व मा नो नि कः पुरुषत्रा नमस्ते॥8॥

हे स्तुतिगायक! इस वचन को कभी भी मत भूलो, ताकि भावियुगों के लोग तुम्हारे इस वचन को सुन सकें। हे कवि! अपनी स्तुतियों में हमारा आदर रखो। हम लोगों को मनुष्यकोटि में नीचा मत लावो। (हमारा) तुम्हें नमस्कार है।

ओ षु स्वसारः कारवे शृणोत ययौ वो दूरादनसा रथेन।

नि षू नमध्वं भवता सुपारा अधोअक्षाः सिन्धवः स्रोत्याभिः॥9॥

हे सुन्दर बहनों! (मुझ) कवि की बात सुनों, (क्योंकि मैं) तुम्हारे पास बहुत दूर से गाड़ी तथा रथ से आया हूँ। अच्छी तरह झुक जाओ। हे नदियों अपनी जलधारा से अक्ष के नीचे होकर (बहती हुई) आसानी से पार करने योग्य हो जाओ।

आ ते कारो शृणवामा वचांसि ययाथ दूरादनसा रथेन।

नि ते नंसै पीप्यानेव योषा मर्यायेव कन्या शश्वचै ते॥10॥

हे कवि! हम तुम्हारी बातें सुनती हैं, (क्योंकि तुम) बहुत दूर से गाड़ी तथा रथ से साथ आये हो। तुम्हारे लिये मैं नीचे झुकती हूँ, जैसे दूध से भरे स्तन वाली औरत (अपने पुत्र के लिए) तथा जैसे युवती अपने प्रेमी का आलिङ्गन करने के लिए (झुकती है)।

यदङ्ग त्वा भरताः संतरेयुर्गव्यन्ग्राम इषित इन्द्रजूतः।

अर्षादह प्रसवः सर्गतक्त आ वो वृणे सुमतिं यज्ञियानाम्॥11॥

(हे नदियों) चूँकि (तुम्हारी अनुमति मिल गई है, इसलिये) भरतवंशी (हम लोग) तुम्हें पार करें, पार जाने की इच्छा वाला (तुम्हारे द्वारा) अनुज्ञात एवं इन्द्र द्वारा भेजा गया (भरतवंशियों का) झुंड (पार करें) (तुम्हारा) प्रवाह अपनी स्वाभाविक गति में प्रवाहित होता हुआ बहे। मैं पवित्र नदियों का समर्थन चाहता हूँ।

अतारिषुर्भरता गव्यवः समभक्त विप्रः सुमतिं नदीनाम्।

प्र पिन्वध्वमिषयन्तीः सुराधा आ वक्षणाः पृणध्वं यात शीभम् ॥12॥

पार जाने की इच्छावाले भरतवंशियों ने पार कर लिया। ब्राह्मण ने नदियों का समर्थन प्राप्त कर लिया। सुन्दर धनवाली (तुम लोग) धन लाती हुई अपनी जगह पर प्रवाहित होओ; भर जाओ; शीघ्रता से बहो।

उद्व ऊर्मिः शम्या हन्त्वापो योक्त्राणि मुञ्चत।

मादुष्कृतौ व्येनसाघ्न्यौ शूनमारताम्॥13॥

तुम्हारी धारा जुवा की कील के नीचे से बहे। जल रस्सी को छोड़ दे। दृष्कृतों से रहित, पापरहित तथा तिरस्कार न करने योग्य (ये नदियाँ) वृद्धि न प्राप्त करें।

❑❑